International Journal of Scientific Research in Science and Technology
© 2018 IJSRST | Volume 4 | Issue 8 | Print ISSN: 2395-6011 | Online ISSN: 2395-602X

शिशुपालवध में उत्प्रेक्षा अलंकार का विनियोजन

डॉ0 ज्योति
एम.ए., पीएच.डी. (संस्कृत)
बी.आर.ए. बिहार विश्वविद्यालय, मुजफ्फरपुर (बिहार)

पक्षिराज गरूड़ के पंखों के रोम के समान लम्बे सुनहरी भूमि में उत्पन्न लता के सूत्रों से बने यज्ञोपवीत पहने हुए तथा स्वयं बर्फ के समान अत्यन्त शुभ्रवर्ण, अतएव वर्षा के बाद में बिजली के समूह से युक्त शुभ्रवर्ण मेघ के समान स्थित भगवान नारद को श्रीकृष्ण भगवान को देखा। स्वभावतः चितकबरे तथा उज्जवल रोमवाले शोभामान कमलनाल के खण्ड के समान शुभ्रवर्णवाले शरीर पर स्थित सुन्दर चमूरू मृग के चर्म से, अनेक रत्न तथा रङगों से चित्रित एवं सूक्ष्म सूतवाले तथा शुभ्रवर्ण ऐरावत शरीर पर ओढ़ाये गये झूल से इन्द्रवाहन गजराज–ऐरावत के समान शोभते हुए नारद को भगवान श्रीकृष्ण ने देखा। निरंतर बजाई गयी वीणा के तारों से क्षत होने घिसने के कारण स्वभावतः उज्जवल अँगूठे के नख की कान्ति से मिली हुई अतएव मूंगों से आधे भाग में परिपूर्ण–सी स्वच्छ स्फटिकमाल से शोभते हुए, नारद को भगवान श्रीकृष्ण ने देखा।

भगवान नारद शुभ होने से हिमालय पर्वत के समान तथा श्रीकृष्ण भगवान श्याम होने से नीलगिरी पर्वत के समान थे। सुदर्शन चक्रधारी श्रीकृष्ण भगवान् की श्यामवर्ण छवि के समूह से मिश्रित शुभ्रवर्ण नारद भगवान की छवि रात्रि में वृक्ष के हिलते हुए पत्तों के बीच से आती हुई चन्द्र किरणों के समान शोभती थी। खिले हुए तमाल आवनूस के समान श्यामल तथा सप्तच्छद छितवन के पराग के समान पाण्डु श्वेत शुभ्र अविच्छिन्न या माङ्गलिक किरणों से आमने–सामने बैठने से परस्पर में मिश्रित हुई क्रांतिवाले वे दोनों नारद भगवान तथा श्रीकृष्ण भगवान् मानो एक रंग के हो गये।

यद्यपि खम्भों तथा खिड़कियों से रहित तथा बिना दीवाल के भीतर स्थित छत के ऊपर या वन में मन्त्र करने के लिए शास्त्रकारों के कहने से और यहाँ पर रत्नजटित खम्भों का वर्णन होने से इस स्थान का मन्त्र के आयोग्य होना सूचित होता है, तथापि उक्त वचन एकान्त स्थान का उपलक्षण होने से वहाँ भी एकान्त स्थान होने से कोई दोष नहीं होता। कुन्दकलिकाग्र के समान दांतोवाले उन श्रीकृष्ण भगवान् की वाणी सभामध्य को प्रकाशित करनेवाले स्मितों से नहलायी गयी के समान शुद्ध वर्ण स्पष्ट अक्षर–समुदायवाली, स्नान कराने सेक

अतिशुभ्ररंगवाली हुई। माघ के काव्य में उत्प्रेक्षा के रूप में बलराम जी कहते हैं– जो राजादि थोड़ी भी सम्पक्ति से अपने को सुस्थिर मानता है, कृतकृत्य ब्रह्म देव उसकी उस सम्पक्ति को भी बढ़ाते नहीं, ऐसा मैं मानता हूँ। दीवालों में चित्रित देवों ने भय से इस प्रकार क्षुभित बलराम के वचनों का मानो सभा की दीवालों की प्रतिध्वनि से अनुमोदन सा किया।

कुण्डल का वर्णन करते हुए माघ कहते हैं कि भगवान् का वक्ष्ज्ञःस्थल श्यामवर्ण का था, उस पर स्वर्ण–कुण्डलों में जड़े गये मरकत मणि की कान्ति पड़कर ऐसी प्रतीत होती थी कि मानो वे बचपन में पहनने योग्य मयूर पंखों की माला पहले हो। भगवान श्रीकृष्ण क्षीर समुद्र में शयन करते हैं, अतः समुद्रमन्थन के समय बाहुद्वय में पहने गये दोनों केयूरों में जड़े हुए रत्न मन्दराचल पर्वत के निचले भाग का करोड़ों बार लगी हुई रगड़ से शाण पर चढ़ाने के समान घिसकर खूब चमकीले हो गये। ऐसे जड़े गये उत्नोंवाले केयूर उन्हें शोभित करते थे। श्रीकृष्ण भगवान् के नखाग्र स्वभावतः अरूण वर्ण के थे, तथा कङ्कणों में जड़े गये पद्मराग मणि की कान्ति पड़ने से वे अधिक अरूण वर्ण होकर ऐसे मालूम पड़ते थे कि आज भी सहस्त्रों वर्ष बीतने पर भी हिरण्यकशिपु की छाती को फाड़ने से निकलते हुये रक्त से भींग कर लाल हो रहे हैं, वे उन अत्यधिक अरूण वर्ण नखाग्रों से शोभ रहे थे।

भगवान श्रीकृष्ण ने समुद्र मन्थन से उत्पन्न एवं किरण समूह से दिशाओं को प्रकाशित करनेवाले कौस्तुभ मणि को पहना, जिसमें प्रतिबिम्वत बाहरी दुनिया, इस जगत् के चराचर पदार्थ मानो ऐसा प्रतीत होते थे कि इनकी कुक्षि में बसनेवाली दुनिया ही प्रत्यक्ष दीख रही हो। अब करधनी पहनने का वर्णन करते हैं कि श्रीकृष्ण भगवान् की करघनी से चरण तक तटकती हुई मोतियों की लड़ी ऐसी शोभती थी कि चरणाङ्गुष्ठ से निकली हुई ऊपर की ओर निरंतर प्रवाहित होनेवाली गङ्गा की धारा का जल हो। अत्यन्त ऊँचा होने से मानो ऊपर खींचते हुए के समान स्थित तथा अत्यन्त बड़े स्तर–मण्डल से अत्यन्त आक्रान्त दबे हुए के समान तथा अत्यन्त कृश स्त्रियों का मध्य भाग कटिप्रदेश नम्र हो गया। अतएव सहस्त्रों मस्तकों से आकाश में तथा सहस्त्रों चरणों से पृथ्वी में व्याप्त होकर स्थित और सूर्य चन्द्र जिसके नेत्र हैं ऐसे हिरण्यगर्भ ब्रह्म के समान सुवर्ण की खानोंवाले उस रैवतक पर्वत को कृष्ण भगवान् ने देखा।

हिमकणों के समान मलिन धूमिल, अङ्गनाओं के नेत्रों के समूहों को अत्यन्त सघन करती हुई, यदुवंशी सैनिकों से क्षणमात्र क्षुण्ण महीन सूक्ष्म की गयी, आकाश में फैलने की इच्छुक रैवतक पर्वत से उठी हुई धूलि ने दिग्भाग को ढ़क दिया। मानो अमृत–रस से सींचे गये, लोगों के श्रम को बार–बार दूर करनेवाले, सैनिकों के द्वारा डालियों में टाँगे गये कपड़ों तथा भूषणों से मनोहर वन के वृक्ष उस समय विचित्र फलोंवाले कल्पद्रुमों के समान शोभने लगे। वृक्ष के नीचे गूथे गये माला योग्य प्रशस्त फूलों से चित्रित अतएव मयूर के पिच्छ–समूह

को पराजित किये हुए तरूणी के केश–समूह को देखकर मानो मोर पेड़ के ऊपर से उड़ गया, क्योंकि मत्सरी दूसरे की समृद्धि में द्वेष करनेवाला अधिक गुणवालों के साथ बड़े कष्ट से बैठते हैं।

इस पद्ध में वसन्तऋतु में विकसित होनेवाले चम्पा तथा अशोक के पुष्प को क्रमशः मदनाग्नि तथा विदीर्ण विरहि–हृदय का मांस माना गया है, इस प्रकार अग्नि–रूप चम्पक पुष्प के मध्यगत मांसरूप अशोक पुष्प का कपिश पिङ्गल वर्ण होना उचित ही है। मञ्जरीयुक्त आम के वन के पराग मानो कामाग्नि के भमूल भूसे को अग्नि के मुर्मुर चूर्ण बन गये अतएव सब ओर से ऊपर में गिरे हुए वे पथिकों को मनाकर प्रसन्न करने के लिए कोई व्यक्ति दूती को भेजता है और वह दूती उस नायिका के पास जाकर उसे अनेकविध प्रिय वचनों से प्रसन्न कर लेती है; उसी प्रकार मानो कामदेव ने भी मधुपश्रेणिको प्रियतमों पर क्रुद्ध नायिकाओं को खुश करने के लिए भेजा है ऐसी प्रतीति कुरूबक पेड़ों से उड़ती हुई भ्रमरश्रेणी को देखकर होती थी। उस मधुपश्रेणि के मधुरशब्द को सुनकर मानिनियों का मान भङ्ग हो जाने से उक्त उत्प्रेक्षा की गयी है।

उक्त सभाक्षोभ के वर्णन प्रसङ्ग में सत्रह श्लोकों के राजाओं के क्रोधानुभाव का वर्णन करते हैं। अपनी हथेली से स्कन्धप्रदेश को स्फालित करने ठोकने पर गद श्रीकृष्ण भगवान के छोटे भाई विजायट के टूट जाने पर टूट–टूटकर उछलते हुए पद्मराग मणियों से ऐसा मालूम होता था कि मानो चिनगारी युक्त यह क्रोधाग्नि ही स्पष्ट रूप में निकल रही हो। उल्मुक नामक ने एक ओर से दूसरी ओर हटते हुए हार–समूह के साथ–साथ जो शीघ्र दूत के सम्मुख हुआ उससे सम्पूर्ण सभा बड़े भारी चट्टान के समान कठोर एवं विशाल कन्धे से भ्रान्त घुमायी गयी सी हो गयी। उस 'उवमुक' राजा के सहसा दूत की ओर घूमने से सभा को भी चक्कर सा आ गया। युद्ध से नहीं भागनेवाले तथा गंभीर ध्वनिवाले वे दोनों सेना–समुन्द्र पंख कटने से पहले एक स्थान पर निवास करने के लिये चाहते हुए विन्ध्य तथा सह्य पर्वत के समान वेगपूर्वक एक दूसरे से मिल गये। दुलकी या सरपट चाल से चलते हुए घोड़ों के झुण्डों के ऊपर की ओर उछलते हुए तथा रस्सी में बँधे हुए सोने के बने स्थासक पानी के बुल–बुले के समान गोलाकार बने हुए भूषण–विशेष, सम्पूर्ण देह में व्याप्त मूत्तिमान अभिमान के शेष अत्यधिक होने से शरीर के भीतर नहीं समाकर बाहर निकले हुए के समान थे।

इस प्रकार विजयश्री ने आलिङ्गित मीनकेतन 'प्रद्युम्न' को देखकर मानो तत्काल क्रोध ने शिशुपाल को प्राप्त किया अर्थात् 'प्रद्युम्न' को विजय करते हुए देखकर शिशुपाल शीघ्र ही क्रद्ध हो गया। चञ्चल खड्गरूप कालिय के वंशावली तथा उल्लसित होते हुए लोहे के कवचों से श्यामवर्णवाली बहन होने के नाते सेना के संहार करने में यमराज की सहायता करती हुई साक्षात् बहन यमुना के समान स्थित। अत्यन्त लम्बे ध्वजा के वस्त्र के अग्र भागवाला उड़ते हुए पताकाञ्चलवाला और मधुर ध्वनियों से कराल अत्यन्त बजते हुए घुंघरूओंवाला वह श्रीकृष्ण भगवान्

का रथ, शत्रु के मारने की प्रतिज्ञा से वाचाल अब मैं शिशुपाल को बिना मारे नहीं छोडुंगा। ऐसी प्रतिज्ञा बार–बार करते हुए, अतएव शिखा खोले हुए स्वयं काल के समान शोभता था। विदर्भ देश के राजा 'रूक्मी' की पुत्री 'रूक्मणी' के स्तनों के कुमकुम से चिन्हित श्रीकृष्ण भगवान् के वक्षःस्थलों को देखकर शिशुपाल बहुत दिनों से सेवित क्रोध से मानो उसी समय युक्त हुआ अर्थात् श्रीकृष्ण भगवान् ने जब रूक्मिणी का हरण किया, तभी से रहनेवाला शिशुपाल का क्रोध, श्रीकृष्ण भगवान की छाती को रूक्मिणी के आलिङ्गन करने से उसके लगे हुए कुमकुम से चिन्हित देखकर और अधिक बढ़ गया।

संदर्भ सूची :

1. विहङ्गराजाङगरूहैरिवायतैर्हिरण्मयोर्वीहवल्लि तन्तुभिः।
   कृतोपवीतं हिमशुभ्रमुच्चकैर्धनंधनावन्ते तडितां गणैरिव।।
   धनान्ते धनमिवेति उपात्तविषयोत्प्रेक्षा सा च जातिभाववस्वरूपा।
   –शिपुपालवध, 1.7
2. निसर्ग चित्रोज्जवलसूक्ष्मपक्ष्मणा लसद्विसच्छेदसिताङ्गसङ्गिना।
   चकासतं चारूचमूरूचर्मणा कुथेन नागेन्द्रमिवेन्द्रवाहनम्।।
   इन्द्रवाहनमिव चकासतमिति वाच्यानुपान्तविषया द्रव्यस्वरूपोत्पोत्प्रेक्षा।
   –वही, 1.8
3. अजसम्रास्फलितवल्लकीगुण क्षतोज्जवलांगुष्ठन खांशुभिन्नया।
   पुनः प्रवालैरिव पूरितार्धया विभान्तमच्छस्फटिकाक्षमालायाः।।
   –वही, 1.9
4. वही पृष्ठ।
5. सम्पदा सुस्थिरंमन्यो भवित स्वल्पयाअपि यः।
   कृतकृत्यो विधिर्मन्ये न वर्धयति तस्य ताम्।।
   वाच्या फलाभावा च सा।
   –वही, 2.32
6. इति संरम्भिणो वाणीर्बलस्यालेख्यदेवताः।
   समाभित्ति प्रतिहवानैभयादन्ववदन्निव।।
   क्रियावाच्योत्प्रेक्षा उपात्रविषया च सा।
   –वही, 2.67